इकाई 2 भूमण्डलीकरण की समझ और इसके जटिल प्रभाव–II (सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक)

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

लक्ष्य और उद्देष्य

2.2 सामाजिक और सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण की समझ

2.2.1 भूमण्डलीकरण के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव

2.3 राजनीतिक भूमण्डलीकरण की समझ

2.3.1 भूमण्डलीकरण के राजनीतिक प्रभाव

2.4 भारतीय वास्तविकताओं की आत्म–विश्लेषणात्मक प्रतिबिम्ब

2.5 भूमण्डलीकरण के प्रभाव

2.6 सारांष

2.7 बोध प्रष्न

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

भूमण्डलीकरण, सामान्य शब्दों में, समाज, अर्थव्यवस्था, राज्यव्यवस्था और प्रौद्योगिकी के एकीकरण की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है, जहाँ समय और दूरी को गौण मानते हुए एक विष्व होने की बात कही गई है। भूमण्डलीकरण की समझ और सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण से उत्पन्न परिणाम भी आर्थिक और प्रौद्योगिकी आयामों के समान ही महत्वपूर्ण हैं। सामान्यतया, इन आयामों को अलग–अलग करना कठिन है क्योंकि ये आपस में बहुत गहराई से जुड़े हुए हैं। इसके अतिरिक्त, इनके मध्य आपसी आदान–प्रदान होता है, जहाँ प्रत्येक अंग का योगदान एक–दूसरे अंगों के योगदान का निर्धारण या पुनर्सुदृढ़िकरण करता है। इसलिए, यदि कोई माने कि भौगोलिक विस्तार और नियंत्रण के लिए व्यापार/वाणिज्य तथा युद्ध महत्वपूर्ण आयाम हैं, भूमण्डलीकरण के समाज संस्कृति और राज्यव्यवस्था की दैनिक दिनचर्या पर विभिन्न प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं। इतिहास में काफी तथ्य हैं जो बताते हैं कि विष्व समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूपों का निर्धारण उत्पादक संगठनों द्वारा होता है।

लक्ष्य और उद्देष्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- सामाजिक–सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण का अर्थ समझ सकेंगे;
- राजनीतिक भूमण्डलीकरण की अवधारणा को जान सकेंगे; और
- सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में भूमण्डलीकरण के प्रभाव की समीक्षा कर सकेंगे।

2.2 सामाजिक और सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण की समझ

भूमण्डलीकरण की समझ के लिए दो प्रकार की धाराओं पर विचार करने की आवश्यकता है। एक, जोकि संस्थागत आयामों की बात करती है जहाँ सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आदान–प्रदान के क्रमिक विकास को स्थानीय से भूमण्डलीकरण तक जानना है। गिडन के अनुसार भूमण्डलीकरण एक "विष्व स्तर के सामाजिक संबंधों की तीव्रता है जो कि दूर अवस्थित स्थानों को इस प्रकार जोड़ता है जहाँ स्थानीय घटनाओं का निर्धारण मीलों दूर हो रही घटनाओं से होता है और यही बात उन इलाकों पर भी लागू होती है।" भूमण्डलीकरण की इस अवधारणा को समाज के आदिम काल से हो रहे पारस्परिक प्रभाव से लेकर आज तक देखा जा सकता है। उनकी अवधारणा की व्याख्या करते हुए, एड्म ने विष्व भर में सामाजिक संबंधों के विस्तार पर काफी उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जैसे मिषन से संबंधित गतिविधियाँ, मध्य युग और बाद में ईसाइयों द्वारा धर्मान्तरण, युद्ध, उपनिवेषवाद इत्यादि। इस ढाँचे के अंतर्गत, भूमण्डलीकरण एक नवीन परिघटना नहीं है। विभिन्न संप्रदायों और धर्मों का धार्मिक प्रभाव भी भूमण्डलीकरण की सीमाओं में आता है। फिर भी, भूखे रहने वाले लोगों को अषिक्षा और उनकी दयनीय हालत के बहाने आर्थिक प्रभावों से अलग करना कठिन है। इन संस्थागत आयामों के अतिरिक्त, भूमण्डलीकरण की समझ के लिए एक अन्य धारा भी है जोकि समकालीन व्यक्तिगत अनुभवों पर आध ाारित है। सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण को परिभाषित करते हुए, एड्म लिखते हैं: "हम एक विष्व संस्कृति की बात कर सकते हैं जहाँ लोग एक निज़ी नागरिक की तरह वैष्विक प्रक्रिया से जुड़े हैं और साथ ही साथ वैष्विक मुद्दों पर सोचने की क्षमता रखते हैं तथा हमारी धरती से संबंधित मामलों जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरण में व्यक्तिगत रूप से शामिल होने की क्षमता रखते हैं।"

प्रौद्योगिकी द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक आदान–प्रदान और वार्तालाप में एक क्रांति आई और इसने भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया की गति को ओर बढ़ाया।

2.2.1 भूमण्डलीकरण के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव

एकाकी समाज के विकास की स्वयं की एक गति होती है, लेकिन अन्य सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं से संस्थागत व्यवस्थाओं या वैयक्तिक समकालीन अनुभवों के रूपों से जुड़ने से, एक मिश्रित प्रभाव पड़ता है। एक वैष्विक दुनिया में, इसने सामाजिक और सांस्कृतिक विस्तार के लिए काफी क्षेत्र उत्पन्न किए हैं। सूचना की भागीदारी से संचार प्रौद्योगिकी को काफी बल मिला है लेकिन इससे बाज़ार भी पैदा हुए और पूँजी की तीव्रता बढ़ी। पूँजी को संस्कृति को पेटेंट करने का अवसर मिला। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव सामाजिक और सांस्कृतिक आयामों के वर्तमान और भविष्य के निर्धारण पर पड़ा। इस एकीकृत विष्व में सांस्कृतिक और सामाजिक प्रचलनों/परम्पराओं के सार्वभौमिकरण से ज़बरदस्त प्रभाव पड़ा है। संस्कृति के भूमण्डलीकरण में प्रौद्योगिकी के विकास और मीडिया के एकीकरण ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेष के कार्यक्षेत्र में दृश्य मीडिया ने काफी तेज़ी से प्रवेष किया है।

चुम्बकीय कम्पास ने व्यापार और वाणिज्य के भौगोलिक विस्तार में अपूर्व क्रांति पैदा की थी। जबकि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर व्यापारिक संबंधों के प्रभावों का विश्लेषण करने के दौरान, हम यह देखते हैं कि सामाजिक और सांस्कृतिक आयामों की कुछ धारणाएँ थीं जिनका प्रभाव औपनिवेषिक इतिहास के दैनिक जीवन पर महत्वपूर्ण रूप से पड़ा। उदाहरण के तौर पर, भारत में, जब पुर्तगाली व्यापार के लिए आए तब वे अपने साथ पपीता, आलू, फूलगोभी, टमाटर, तम्बाकू और अन्य सामग्री लाए थे, जोकि अब भारतीय समाज के अभिन्न अंग बन गए हैं और हम उन्हें मूलतः यहीं का मानते हैं। लेकिन अमिया मानती हैं कि इनकी उत्पत्ति अमेरिका में हुई (बागची, 2004, पृ. सं. 5)।

इंग्लैंड में हुई औद्योगिक क्रांति प्रौद्योगिकी विकास की ओर बड़ी सफलता थी। जिससे लोगों के सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया, विशेषकर वस्तु, वस्त्र, स्वास्थ्य, स्वक्षता, आवास, परिवहन और संचार इत्यादि में। प्रगति केवल उन क्षेत्रों में हुई जिनकी पहुँच इस विकास और आधुनिकता तक थी। इस विकास और एकीकरण की मौटे तौर पर दो प्रकार की धाराएँ हैं। एक पक्ष उनका प्रतिनिधित्व करता है जो इस प्रक्रिया में भाग ले सकता है (लक्षित समृद्ध समूह अल्पमत) और उन्हें भी भिन्न–भिन्न मात्रा में (वंचित बहुमत) इस प्रक्रिया से शामिल किया गया जो इससे बाहर थे।

गुप्ता ने विष्व संस्कृति की विश्लेषणात्मक व्याख्या करते हुए समावेष और अपवर्जन का विशिष्ट रूप से वर्णन किया है (गुप्ता, 2004)। जहाँ वह अपने तर्क से वे कहते हैं कि संस्कृति के भूमण्डलीकरण ने अपवर्जित समूह को वापस स्वयं की संस्कृति के मूल की ओर धकेल दिया, इस तर्क को और मज़बूत करने के लिए वह मार्टिन बारबेरो (1993) और मूर्ले और राबिन्स (1995) के तर्कों का विवरण देती हैं। वैष्विक मीडिया ने पूँजीवादी उपभोक्तावाद को बढ़ाया और सांस्कृतिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। वर्तमान दौर का भूमण्डलीकरण जो कि पूँजी की स्वतंत्रता के द्वारा आ रहा है, इसके परिणामों की समझ के लिए अवांछनीय सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभावों को भी देखना आवष्यक है। मित्रा के अनुसार एड्स के बढ़ते हुए मामले सांस्कृतिक रूप से संवेदनषील लोगों और समाजों के लिए चिंता का विषय बन गया है (मित्रा, 2004, पृ. सं.16–17)। मानव विकास रिपोर्ट सन् 2001 यह मानती है कि "भूमण्डलीकरण ने सीमापार अपराध को पनपने के काफी अवसर पैदा किए हैं और बहुराष्ट्रीय अपराधों के नेटवर्क को भी बढ़ाया है" (मानव विकास रिपोर्ट, 2001, पृ.13)। वैष्विक वित्तीय संकट से कुछ कर्मचारियों की छँटनी हुई जिसने लोगों को हाषिए में पहुँचाने में वृद्धि की, जिसके फलस्वरूप अपराध का विस्तार तीव्र गति से होने लगा है।

संपूर्ण विष्व में एक कठोर असमानता उपस्थित है। मानव विकास रिपोर्ट के तथ्यों पर एक नज़र डालें तो हम पाते हैं कि विकासषील देषों की लगभग 24 प्रतिषत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करती रही है। यदि यह वर्ष 2015 तक आधी कम हो जाती है, जैसा कि संयुक्त राष्ट्र ने घोषणा की है, तब भी 900 मिलियन लोग अत्यधिक गरीब ही रहेंगे, लगभग 826 मिलियन लोग कुपोषित रहेंगे तथा लगभग एक बिलियन लोग उन्नत जल संसाधनों से वंचित रहेंगे (मानव विकास रिपोर्ट, 2001, पृ.22)। हालाँकि, क्षेत्रवार गरीबी यह दर्षाती है कि लगभग 1199 मिलियन लोगों की आय प्रतिदिन एक अमरीकी डॉलर से भी कम है। पिछली इकाई में, विभिन्न क्षेत्रों में गरीबी स्तर से संबंधित काफी तथ्य दिए गए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) की विष्व रोज़गार रिपोर्ट विष्व अर्थव्यवस्था के चुने हुए देषों की बढ़ती हुई बेरोज़गारी का चेतावनी भरा दृश्य उपलब्ध कराते हैं।

विष्व आर्थिक मंच के प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए, तत्कालीन महासचिव कॉफी अन्नान ने विष्व नागरिकों को सचेत किया कि : "मेरा यह प्रस्ताव है कि हममें से कोई भी इस छोटी नाव में अपने सहयात्रियों की हालात को अनदेखा नहीं कर सकता। यदि वे बीमार हैं, हमें संक्रमण होने का डर है। यदि वे क्रोधित हैं, हमें चोट लग सकती हैं।" विकास से संबंधित विशेषज्ञों के मध्य एक आम विचार है कि भूमण्डलीकरण ने गरीबों को अनदेखा किया है। जैसा कि मानव विकास रिपोर्ट (2000) इंगित करती है कि "अधिकतर अत्यधिक गरीब देष उन्नत वैष्विक अवसरों से हाषिए पर आ गए हैं। अमीर और गरीब देषों के मध्य आय का दायरा बढ़ता जा रहा है" (मानव विकास रिपोर्ट, 2001, पृ. 21)। इस कटु अनुभव के फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्र ने गरीबी कम करने के लिए सुदृढ़ लक्ष्य और घोषणा की: "सम्मेलन के नेताओं ने संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दी घोषणा को स्वीकार किया जिसमें वैष्विक स्तर पर मानवीय गरिमा, समानता और समता के सिद्धांतों को बनाए रखने की बात थी।" घोषणा में गरीबी स्तर को वर्ष 2015 तक आधा कम करने की संभावना दिखाई देने लगेगी। अन्नान ने यह भी दोहराया कि "काफी लोगों के मध्य यह एक आम धारणा है कि भूमण्डलीकरण की यह कमी है कि इसे एक विष्व

संभ्रात वर्ग चला रहा है, जिसके प्रतिनिधि ही इस सभा में शामिल थे" (कृष्णा स्वामी, फरवरी 5, 2002)। बढ़ती हुई गरीबी और असमानता के बीच से इस सभ्रांत वर्ग की उम्मीदें थी – सार्वभौमिक सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों में भागीदारी, लेकिन इससे कुछ नकारात्मक परिणाम सामने आए। इस प्रभाव के कारण विभिन्न समाजों के अंदर सौहार्दता, निजता और स्थानीय सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेष को चुनौती मिली है।

2.3 राजनीतिक भूमण्डलीकरण की समझ

समय और दूरी ने राजनीति और इसके बदलते बाहरी ढाँचे में महत्वपूर्ण विभाजन उत्पन्न कर दिया है। भूमण्डलीकरण के कारण सत्ता के ढाँचे में परिवर्तन आने से आधुनिक राज्य की राजनीतिक और सत्ता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण विकास हुआ है। पैरिटिक के अनुसार, संस्थागत ढाँचे के विश्लेषण में औद्योगिक पूँजीवाद के उद्भव के दौरान तथाकथित अहस्तक्षेप (लेसेस–फेयर) राज्य की उत्पत्ति के समय राजनीतिक भूमण्डलीकरण के तत्वों को देखा जा सकता है। अब यह एक एकाधिकारी पूँजीवादी राज्य के स्तर तक पहुँच गया है। पटनायक की राय में पूँजी की प्रकृति में आ रहे परिवर्तन से राज्य की प्रकृति में परिवर्तन आता है और इससे राज्यों के मध्य संबंधों में परिवर्तन आता है जिससे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के तौर तरीकों में भी परिवर्तन आता है (पटनायक, 2003, पृ.89)। सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ (सोवियत संघ) के टूटने से विष्व एक ध्रुवीय शक्ति हो गया और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त मज़बूत हुआ। तृतीय विष्व पर थोपी गई नीतियों ने यहाँ गरीबी और निर्भरता को बढ़ाया है जिससे इन देषों की संप्रभुता और स्वतंत्रता पर ख़तरा मँडराने लगा है। साम्राज्यवादी ताकतों के इस कृत्य का विरोध हुआ, किन्तु इन शक्तियों द्वारा अधिकतर समय इस विरोध को निरंकुष ढंग से समाप्त कर दिया गया (वही, पृ.102–03)।

राजनीति का एक अन्य आयाम है जिसने राज्य और सत्ता (प्राधिकार) की पुनर्संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह तीन महान क्रांतियाँ – फ्रांस, रूस और चीन है – जिन्होंने राजनीति के भूमण्डलीकरण और पुनर्संरचना में महत्वपूर्ण योगदान दिया। रोचकपूर्ण बात यह रही कि फ्रांस दो विरोधाभासी साध्यों–समानता और स्वतंत्रता के मध्य साम्यता स्थापित कर पाया लेकिन अमेरिका में स्वतंत्रता के साथ असमानता को झेलना पड़ा (अमीन, 2005, पृ. सं. 56–58) है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नया मोड़ आया, और बुर्जुआ पूँजीवादी विकास के लिए कल्याणकारी राज्य का उद्भव हुआ जिससे घरेलू राष्ट्रों की जनता का रोष कम होने लगा और साथ–ही साथ उपनिवेषवाद का विस्तार होने लगा। वर्चस्व की प्रतिस्पर्धा और पूँजी की पुनरावृत्ति की प्रक्रिया अनवीनीकरण संसाधनों व्यापार और वाणिज्य पर नियंत्रण के लिए शुरु हो गई जिसके फलस्वरूप दो विष्व युद्ध हुए जिनमें काफी जानमाल की हानि हुई। द्वितीय विष्व युद्ध के बाद पूँजीवादी सरकार के नेतृत्व की कमान संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने हाथों में ले ली।

ब्रेटन वुड्स सम्मेलन में पूँजीवादी राष्ट्रों का व्यावसायिक आधार पर एक गुट बना जिसने अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की नींव रखी – अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) और अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण विकास बैंक (IBRD), जोकि लोकप्रिय रूप से विष्व बैंक के रूप में पहचाना जाता है जो कि पूँजीवादी शक्तियों के लिए एक प्लेटफार्म की तरह है। जबकि ये दोनों संस्थाएँ वित्त के द्वारा राजनीति का संचालन करती हैं, संयुक्त राष्ट्र एक विष्व मंच के रूप में उभरा है जहाँ विष्व के समुदाय शासन के लोकतांत्रिक विकास और नीतियों से संबंधित वार्तालाप करते हैं। औपनिवेषिक शोषण के विरुद्ध विभिन्न देषों की एकजुट लामबंदी से धीरे–धीरे देषों को स्वाधीनता मिली और साथ–साथ लोकतांत्रिक सरकारों का गठन हुआ जिससे लोगों को इच्छाओं को पूरा करने का अधिक अवसर मिले। इस प्रकार, जन आंदोलनों से व्यवस्थापिका द्वारा कुछ मात्रा में नागरिक अधिकार प्राप्त हुए, लेकिन कुछ लागू हुए और

अन्य को यथास्थिति में ही रखा गया। पूँजी के क्रमिक विकास से, राष्ट्र–राज्य ने व्यवस्थापिकाओं/कानूनों द्वारा बाज़ार और उसके सहयोगी संस्थाओं को अवसर प्रदान किए; जहाँ अधिकतर जनता के हितों की बजाय पूँजीवादी कार्यों को अधिक स्थान मिला। धीरे–धीरे राज्य की भूमिका जो अब तक कल्याणकारी थी, सीमित होने लगी। वित्तीय पूँजी भूमण्डलीकरण, उदारीकरण और निज़ीकरण से बड़े पैमाने पर आने लगी। गैट (GATT) से एक नए संघ विष्व व्यापार संगठन (WTO) का जन्म हुआ जिसने समान आर्थिक क्षेत्र उपलब्ध कराने के नाम पर बहुराष्ट्रीय और पार–राष्ट्रीय पूँजी को संरक्षण दिया।

यह तर्क दिया जाता है कि राष्ट्रीय सरकारें स्वयं की अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने के लिए तरह–तरह की राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों, श्रमिक और कल्याणकारी कानूनों और व्यापार पर सार्वजनिक स्वामित्व बनाए रखने के लिए एक परिवर्तनीय नियामक व्यवस्था का प्रयोग करती हैं। लेकिन अधिक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण और वित्तीय भूमण्डलीकरण ने राष्ट्रीय सरकारों की इस नियंत्रणकारी क्षमता को कम कर दिया (रेडिष, 2006, पृ. 157–158)। आगे, राष्ट्रों ने स्वयं को केंसवाद और कल्याणकारी लक्ष्यों से दूर करके स्वयं के आर्थिक ढाँचों को पुनर्गठित किया है। इस पुनर्गठन से राष्ट्र, बाज़ार और राजनीतिक प्रक्रिया से संचारित विष्व व्यापार एजेंडा को तय करते हैं (वही, पृ. 167)। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान में बहुत सी पार–राष्ट्रीय अन्तर्राज्यीय सरकारों का द्विपक्षीय व्यापार और वित्त के आधार पर गठन हुआ है, जिसका नेतृत्व व्यापक रूप से अमरीकी प्रभुत्व के अधीन रहा है। विष्व बाज़ार जो कि राष्ट्रों द्वारा संरक्षित रहता था उसे वांषिगटन सहमति/सिद्धांत (Washington Consensus) द्वारा लगभग समाप्त कर दिया गया था। विकसित राष्ट्रों ने स्वयं की मुक्त व्यापार व्यवस्था के अंदर विकासषील राष्ट्रों को समाहित कर लिया। निःसंदेह, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के अच्छी तरह से एकीकृत होने के बावजूद इस प्रक्रिया के कारण राष्ट्रीय सरकारों ने स्वयं की स्वायत्तता को खो दिया है। इस कारण हित समूह राजनीति को भी खराब दौर से गुज़रना पड़ रहा है। व्यापारिक संगठनों (ट्रेड यूनियन) ने जो स्थान संगठित क्षेत्रों में संघर्ष करके बनाया था, श्रमिक सुधारों की प्रक्रिया ने उसे कम कर दिया। अनुबंध आधारित श्रम, नौकरी में लेना और निकाल देना (हॉयर एंड फॉयर), ऐसा अनुबंध जिसके आधार पर कभी भी नौकरी से निकाला जा सकता है (गोल्डन हैंडषेक), बाहरी नीतियाँ इत्यादि को लाया गया जिनके परिणामी प्रतिरोध काफी कम हैं। इस प्रकार, औद्योगिक रूप से समृद्ध राष्ट्र राजनीति के भूमण्डलीकरण से सषक्त होकर अपने समक्ष बढ़ते संकटों से सामंजस्य बैठाकर स्वयं के हितों को सार्वजनिक सरकार और विकास का जामा पहनाकर अन्य के ऊपर थोपते हैं। नई साम्राज्यवादी राजनीति विकासषील राष्ट्रों को शर्तों के आधार पर विकास अनुदान देने के नाम पर अपने अधीन करती हैं। इससे विकासषील राष्ट्र निर्भरता के चंगुल (Syndrome) में फँस जाते हैं और स्वयं की राजनीतिक और आर्थिक नियंत्रण की शक्ति को खो देते हैं।

2.3.1 भूमण्डलीकरण के राजनीतिक प्रभाव

सामान्य तौर पर विकास के चहुँमुखी प्रभाव ने और विशेषतः प्रौद्योगिकी विकास ने, समाज की कठिनाइयों और कष्टों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालाँकि, इसने मानवता के समक्ष कुछ चुनौतियाँ पैदा की हैं, क्योंकि इतिहास में प्रौद्योगिकी का विकास सभी वर्गों तक नहीं पहुँचा है। प्राधिकार के विकास की प्रक्रिया, शक्ति संरचना और राज्य, विकास और प्रौद्योगिकी का प्रयोग आदि हमेषा शासक वर्ग के पक्ष में ही रहे हैं। जब समाज सामंतवादी राज्य द्वारा शासित होता था, उस दौरान प्रौद्योगिकी विकास का उपयोग योद्धाओं को दक्ष करने के लिए होता था। अगर समाज शुरुआत में बुर्जुआ लोकतंत्र द्वारा कल्याणकारी राज्य के आधार पर शासित होता है, और बाद में यह परा–राष्ट्रीय पूँजी से शासित होता है, तब इस प्रौद्योगिकी विकास का लाभ साधारणतया पूँजीवादी एजेंसियों और समाज को मिलेगा। प्रौद्योगिकी विकास से उपजे लाभों को पाने की होड़ ने विष्व की साधारण जनता के हितों को नुकसान पहुँचाया है जिसके फलस्वरूप बेरोज़गारी, गरीबी और मानवीय कष्टों की

व्यापकता के साथ विष्व का असंतुलित विकास हुआ। क्षेत्र विशेष की आवष्यकताओं और अल्पकालीन कार्यों को छोड़कर विष्व में श्रम बचाने वाली तकनीक और रोज़गारों की कमी की वृद्धि ही विष्व के समाजों पर छाई हुई है।

साधारण लोगों की लोकतांत्रिक संस्थाओं तक पहुँच कुछ हद तक बढ़ी है। बहुत से संवैधानिक प्रावधान उनके कल्याण के लिए बनाए गए हैं और उनमें से कुछ को लागू भी किया गया है। हालाँकि, लोकतंत्र अभी भी एक कुलीनतंत्र संस्था की तरह कार्य कर रहा है और सही तौर पर सहभागिता होना अभी बाकी है। इसीलिए, सार्वभौमिक रूप से स्वतंत्रता के बारे में गाँधी ने सन् 1940 के आरम्भिक दशक में लिखा थाः "एकाकी स्वतंत्रता विष्व राष्ट्रों का उद्देष्य नहीं है। यह स्वैच्छिक अन्तर्निर्भरता है। आज की बेहतर सोच स्वतंत्र राष्ट्रों के निर्माण की बात नहीं करती है। क्योंकि सार्वभौमिक स्वतंत्रता अंतिम लक्ष्य है। और घटनाओं को पूरा करने की कोई बात नहीं करता है। मैं मेरे राष्ट्र के लिए कोई बड़ा दावा नहीं करता हूँ। हम सार्वभौमिक औद्योगिक को प्राप्त कर सकते हैं, इस बात पर मुझे न तो आष्चर्य है और न ही यह असंभव है" (नारायण, 2003, पृ. 23)। इससे भी अधिक, राजनीतिक समाजों ने राजनीतिक व्यवस्था के लिए "सहभागी लोकतंत्र" को सर्वोत्कृष्ट माना है। पूँजी से नियंत्रित राष्ट्र और उनकी एजेंसियों ने सहभागिता के साथ समयोजन किया है। इसलिए, यहाँ राज्य द्वारा समायोजित सहभागिता के विचार पर ध्यान देना आवष्यक है।

विचारधाराओं के प्रतिरोध ने आधुनिक दौर में स्वतंत्रता, समानता और बंधुता (भातृत्व) जैसे मूल्यों को शामिल किया है जोकि फ्रांस की क्रांति से उत्पन्न हुए हैं। लोगों के औपनिवेषिक शोषण के विरुद्ध लामबंद होने से क्रमषः राष्ट्रों को औद्योगिकी मिली जिसके फलस्वरूप लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना हुई। किन्तु इतिहास दर्षाता है कि लोकतांत्रिक संस्थाओं की उपेक्षा हुई है, जब उन्होंने पूँजीवादी विस्तार के उद्देष्यों को पूरा नहीं किया है। विकसित राष्ट्रों द्वारा विकासषील राष्ट्रों के लिए अनुदान में कटौती करना और अपने बाज़ार खोलना और हाल ही में हुए अफगानिस्तान और इराक पर हमले, जो कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अधीन असंगत हैं, एक मुख्य उदाहरण के रूप में दर्षाए जा सकते हैं। इस प्रकार, भूमण्डलीकरण के लोकतांत्रिक मानवीय मुखौटे के पक्ष में तर्क देने के दौरान सतर्क रहना चाहिए। यद्यपि, वैष्वीकृत प्रतिरोध राजनीति के भूमण्डलीकरण का एक अन्य आयाम है। विष्व व्यापार संगठन के सिएटल और हाँगकांग सम्मेलनों में नागरिक समाज (सिविल सोसाइटी) संगठनों द्वारा वैष्विक प्रतिरोध के काफी उदाहरण हैं।

संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव कॉफी अन्नान ने सन् 2002 में विष्व आर्थिक मंच के सम्मेलन में अपने भाषण में कहा कि, "हकीकत यह है कि इस विष्व में शक्ति और संपदा की हिस्सेदारी में असमानता है और अधिकतर लोग गरीबी और निम्न स्तर का जीवन जीने को मज़बूर हैं" (कृष्णास्वामी, फरवरी 5, 2002)। यद्यपि, आगे की तरफ बढ़ने और व्यापकता से कई अवसर उत्पन्न हुए हैं, लेकिन ये अवगुणों से मुक्त नहीं हैं। इसलिए, वर्तमान विष्व की चुनौतियों को समझने के लिए आवष्यक है कि विष्व की प्रगति के इतिहास को देखना होगा जो उसका स्वयं साक्षी है।

2.4 भारतीय वास्तविकताओं का आत्म–विश्लेषणात्मक प्रतिबिम्ब

आधुनिक भारत ने विष्व व्यापार, वाणिज्य और राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, प्रारंभ में औपनिवेषिक शक्ति के अधीन रहा और बाद में राष्ट्र मंडल तंत्र के द्वारा लोकतांत्रिक वैष्विक सरकार के गुट के रूप में शामिल है। वित्तीय पूँजी की वैष्विक राजनीति के साथ भारत का एकीकरण सन् 1991 की "नई आर्थिक नीति" को ग्रहण करने के बाद और तीव्र हो गया। शैक्षिक, राजनीति और नागरिक समाजों के प्रतिरोध के बावजूद शासक वर्ग ने विष्व बैंक के एजेंडे में बढ़ोतरी की। विकसित

विष्व, अमेरिका के प्रभुत्वषील नेतृत्व के अधीन, इन नीतियों द्वारा अपने संकटों को विकासषील देषों पर डालने में सफल रहे हैं। भारत भी काफी मायनों में शोषित रहा है उदाहरण के तौर पर, बढ़ती बेरोज़गारी, असमानता, निर्देषात्मक और अधीनस्थ राजनीति, जोकि सब विकास के गलत दृष्टिकोण से हुआ। इसके अलावा, किसानों द्वारा आत्महत्याएँ, कामगारों की छँटनी, मुक्त विशेष आर्थिक क्षेत्र, वित्तीय संस्थानों इत्यादि इसी समय सामने आए। यद्यपि विष्वव्यापी मंदी ने भी इसे कुछ हद तक प्रभावित किया है। इन घटनाओं का भारतीय समाज के सामाजिक–सांस्कृतिक आयामों पर चौतरफा प्रभाव पड़ा है। सूचना प्रौद्योगिकी के विकास से शैक्षिक अभिविन्यास, कला और राजनीतिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेष करने से ग्रामीण नाट्यकला (थियेटर) विष्व को नुकसान हुआ है। हालाँकि, यह निर्भरता का जाल कुछ ही सालों में नहीं आया।

स्वतंत्रता से पहले भारत औपनिवेषिक शोषण के द्वारा आश्रित और वंचित रहा जिसका मुख्य कारण था संसाधनों का भारत से ब्रिटेन को चले जाना। स्वतंत्रता के पष्चात, औपनिवेषिक शासन के ख़ुमार और इसकी नीतियों की दृढ़ता बनी रही, इसलिए संसाधनों के हस्तांतरण की क्रियाविधि को एक जटिल नीतिगत ढाँचे द्वारा बरकरार रखा गया। इस उपसंकल्पना पर काफी लम्बी बहस हुई और यह नव औपनिवेषिक कूटनीतियों के उद्भव के साथ और भी तीक्ष्ण हो गई और इसी आधार पर संस्थाओं ने उदारीकरण का अनुसरण किया और बाज़ारोन्मुखी विकास कूटनीतियों द्वारा हर प्रकार के नुकसान की भरपाई की कोषिष की गई। अब, परिणाम स्पष्ट रूप से दिख रहे हैं कि इस विकास की प्रक्रिया में गरीबों को नज़रअंदाज़ कर दिया गया है।

"रोज़गार के क्षेत्र में कमज़ोर प्रदर्षन के लिए उत्पादन की तकनीकों के ऊपर आरोप लगाया जाता है जो कि देष के प्राकृतिक संसाधनों की अच्छी परख न होने की वज़ह से होता है। यह आर्थिक रूप से आंशिक सही हो सकता है, पूर्ण रूप से नहीं। निर्भरता के चंगुल की तरफ हमारी धीमी किन्तु लगातार गति जो कि बढ़ते हुए विदेषी सहयोग से प्रदर्षित होती है, इसने न केवल हमारे आत्मनिर्भरता के विकास की नीतियों को नज़रअंदाज किया गया है वरन पिछले समय में बेरोज़गारी में वृद्धि के लिए भी यही ज़िम्मेदार है" (प्रसाद, 1991)।

स्वतंत्रता के बाद, देष में विकास की ओर काफी प्रयास किए गए जिससे रोज़गार की स्थिति में सुधार हो, गरीबी में कमी हो और लोगों को बेहतर जीवन की स्थिति उपलब्ध हो। मिश्रित अर्थव्यवस्था का मॉडल सार्वजनिक और निज़ी क्षेत्रों के साथ विकास की तरफ बढ़ने के लिए अपनाया गया। योजना और सामुदायिक विकास को शुरु किया गया, और नीति निर्माताओं की मुख्य सोच रही कि सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा आधारिक संरचना के निर्माण द्वारा विकास में संवृद्धि की जाए, इसे लाभ प्राप्त करने के उद्देष्य से भी अलग रखा जाए। एक ऊँची सकल घरेलू उत्पाद के साथ मूलआधारिक संरचनाओं में उन्नति हुई और गरीबी के अनुपात में भी कमी आई। रोज़गार के प्रति वर्ष वृद्धि के प्रतिषत में कमी आई (भारत सरकार, 2002, पृ.158–160) और ग्रामीण बेरोज़गारी का पैमाना सन् 1990 के दषक में बढ़ने लगा (भारत सरकार, 2002, पृ.161–163)। ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम लोगों को पर्याप्त रोज़गार के अवसर मुहैया कराने में लगभग असफल रहा (राधाकृष्ण, 2002, पृ. 245)। सरकारी दस्तावेज़ भी यह बताते हैं कि शहरी और ग्रामीण लोगों की आय में अंतर 1: 2 से 1:6 तक बढ़ा है (भारत सरकार, 2000)। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी दर घटने का प्रतिषत सन् 1970 के दषक में 2.75 प्रतिषत था और सन् 1980 के दषक में मुष्किल से 0.73 प्रतिषत हुआ और इसलिए गरीबी घटने की दर ग्रामीण जनसंख्या दर की बढ़ोतरी से नीचे रही (राधाकृष्ण, 2002)। इन सभी निराषाजनक संकेतों के बावजूद, आधिकारिक तथ्य इस बात का दावा करते हैं कि सन् सन् 1999–2000 के दौरान गरीबी में ज़बरदस्त कमी आई है। इस आँकड़े को निरूपित करने के लिए अपनाई गई विधि अभी तक विवादास्पद है (वैद्यानाथन, 2001; सुंदरम और तेंदुलकर, 2001; सेन, 2001)। भारत के योजना आयोग के आधिकारिक दस्तावेज़ों

में माना गया है कि, "अभी इस चुनौती को पूरा किया जाना बाकी है कि पर्याप्त रोज़गार के अवसर पैदा किए जाएँ जिसमें सभी लोग आवष्यकता अनुसार भोजन खरीदने की क्षमता रखें। लाभपूर्ण रोज़गार खाद्य सुरक्षा और आर्थिक सुरक्षा का एक आवष्यक तत्व है" (भारत सरकार, 2002, पृ.57)।

सन् 1925 के शुरुआती समय में, गाँधी ने लिखा कि, "अधिकतर बुराइयों (समस्याओं) की जड़ आलस्य (कार्यहीनता) में होती है, यदि इस जड़ को नष्ट कर दिया जाए तो अधिकतर बुराइयाँ स्वतः ही समाप्त हो जाएगी" (गाँधी, 1947, पृ.463)। वे आगे कहते हैं कि "जब तक भारत से गरीबी और बेरोज़गारी नहीं जाएगी, तब तक मैं यह नहीं मानूँगा कि हमें स्वतंत्रता मिली है (वही)। इन कथनों से उनकी गहरी सोच और स्वतंत्रता के अर्थ का पता चलता है जिन्हें लेकर भारत को आगे बढ़ना था। इस प्रकार, गाँधीवादी संरचना में राजनीतिक स्वतंत्रता आर्थिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता से अलग नहीं थी। किसानों द्वारा आत्महत्या की बढ़ती घटनाओं से उनकी अकथनीय दरिद्रता और तंगहाली का पता चलता है। आज राष्ट्र अपनी ज़िम्मेदारियों से पीछे हट रहा है और क्रमषः बाज़ारोन्मुखी नीतियों को ग्रहण कर रहा है, जिसमें रोज़गार के अवसर कम हो रहे हैं, वर्तमान विष्व वित्तीय संकटों से यह और भी गंभीर हो गया है।

स्वतंत्रता के पष्चात् योजनाओं के प्रारंभ में, भारत में उन्नति के मूल उद्देष्यों के साथ अर्थव्यवस्था, सरकार और समाज के पुनर्निर्माण का लक्ष्य निर्धारित किया गया। साथ ही योजना और सामुदायिक विकास कूटनीति के संयोजन से सामाजिक न्याय स्थापित करने की बात भी हुई। जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज़ स्पष्ट रूप से बताते हैं कि, "वर्तमान में विकास को वस्तुओं की आपूर्ति की वृद्धि के रूप में ही नहीं देखा जा सकता, यहाँ इस बात की भी निष्चितता होनी चाहिए कि वृहद उद्देष्यों की तरफ भी लगातार ध्यान जाए, जिससे पूर्ण रोज़गार में वृद्धि हो और आर्थिक असमानताओं में कमी आए। अधिकतम उत्पादन, पूर्ण रोज़गार, आर्थिक और सामाजिक न्याय की स्थापना इत्यादि जोकि वर्तमान विकास योजनाओं के स्वीकृत उद्देष्य हैं, जिनकी देखरेख एक राष्ट्र को करनी चाहिए .. सीमित उत्पादन की वृद्धि को भी हम प्राप्त नहीं कर पाएँगे जब तक कि सामाजिक नीतियों के वृहद उद्देष्यों को मस्तिष्क में रखकर लगातार उनका पीछा न किया जाए (भारत सरकार, 1960, पृ.25)।

यह भावना यथा समय में समाप्त हो गई। सन् 1990 के दषक के दौरान आर्थिक उदारीकरण, निज़ीकरण और भूमण्डलीकरण बेरोज़गारी और गरीबी की समस्याओं का समाधान करने के लिए प्रभुत्वषील नीतियों के रूप में उभर कर आए। लेकिन रोज़गार के मामले में परिणाम अच्छे नहीं वरन विपरीत आए। राष्ट्र रोज़गार प्रदान करने की ज़िम्मेदारी से पीछे हट गया, यह राष्ट्रीय नेताओं के आष्वासन के विपरीत हुआ, इन नेताओं का स्वनिर्भरता विकास और वितरणात्मक न्याय के साथ प्रगति का सपना था। विकास के समाजवादी दृष्टिकोण के स्थान पर बाज़ारोन्मुखी विकास को लाया गया। विष्व बाज़ार आर्थिक संकट के जाल में फँस चुका है और विष्व में काफी लोगों की नौकरियों से छँटनी हुई है, जिससे भारत भी अछूता नहीं रहा। उत्तर आधुनिकता द्वारा सकारात्मक विकास लाने के बड़े–बड़े दावे असफल रहे हैं।

2.5 भूमण्डलीकरण के निहितार्थ

भूमण्डलीकरण के निष्चित परिणाम हैं और अन्तर्राष्ट्रीय समुदायों ने राष्ट्रीय और स्थानीय पहचान के ऊपर इसके संभावित ख़तरों को स्वीकार किया है तथा बहुसांस्कृतिक नीतियों द्वारा आने वाली विविधताओं और बहुलता पर भी ज़ोर दिया है। एक मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, भूमण्डलीकरण राष्ट्रीय और स्थानीय पहचानों के लिए ख़तरा होता है। इसका समाधान संकीर्णतावाद और तटस्थतावादी

राष्ट्रवाद की शरण लेना नहीं है। यह बहुसांस्कृतिक नीतियों की रचना द्वारा विविधता और बहुलवाद को बढ़ाना है" (यू एन डी पी, मानव विकास रिपोर्ट, 2004, पृ.10)। लेकिन प्रष्न यह उठता है कि उन्हीं नीतियों और शासनों द्वारा इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है जिन्होंने इसे नष्ट कर दिया। इसके लिए विकास के वैकल्पिक रास्ते ढूँढ़ने होंगे जिनसे आने वाले लक्ष्यों को पूरा किया जा सके। भूमण्डलीकरण ने मुख्यतया पूँजी के मूल्यों का सार्वभौमीकरण किया है और शासन की संरचना में एकरूपता पैदा की है लेकिन वहीं इन शासनों को स्थायित्व के लिए सामाजिक और सांस्कृतिक समर्थन भी आवष्यक है।

विष्व के विकास के लिए अपनाई जाने वाली मुख्यतः दो धाराएँ हैं। पहली – विकास के लिए पूँजीवादी मार्ग, जो कि उदारवादी सुधारकों को भी स्वयं में शामिल करता है। दूसरा मार्ग है, साम्यवादी अनुभवों पर आधारित। पूर्ववर्ती धारा, जिसकी काफी बड़ी उम्मीदें रहीं हैं, आंतरिक विरोधों के कारण गतिहीनता, अवस्फीति, बेरोज़गारी, गरीबी और वर्तमान में वैष्विक वित्तीय संकट इत्यादि के कारण यह धारा अंतिम साँसे गिन रही हैं। परंतु साम्यवादी प्रचलन द्वारा 7 दषकों तक पूर्ण रोज़गार मुहैया कराने का रिकार्ड रहा है, सोवियत संघ के विखण्डन के बाद यह समाप्त हो गया। अभी भी कुछ राष्ट्रों में यह प्रचलन उच्च वृद्धि दर के साथ ज़ारी है, उदाहरणस्वरूप चीन और वियतनाम दोनों के नाम दिए जा सकते हैं। भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था को गाँधीवादी सोच और समाजवाद साथ अपनाया गया, जिसकी गत्यात्मकता में भी कमी आई है। बाज़ारोन्मुखी विकास द्वारा धीरे–धीरे भारत की विकास प्रक्रिया की समतावादी धारणाओं को बदला जा रहा है। रोचकपूर्ण संयुक्त राष्ट्र ने अहिंसा को भूमण्डलीकरण के लिए सुरक्षा कवच (सेफ्टी वाल्व) माना है।

गाँधी का विष्व राजनीति को लेकर अलग दृष्टिकोण था, जैसे समुद्री वृत्त, जहाँ स्वतंत्रता को अन्तर्निर्भरता के अस्तित्व के साथ माना है। उनके विष्व दृष्टिकोण के अनुसार, "स्वतंत्रता की शुरुआत निचले स्तर से होनी चाहिए। इसलिए, प्रत्येक गाँव गणराज्य होगा और पंचायत के पास संपूर्ण शक्तियाँ होंगी। इसके फलस्वरूप, प्रत्येक गाँव स्वयं के अस्तित्व को बनाए रखने में सक्षम होंगे और संबंधित मामलों को संभाल सकेंगे, साथ ही बाहरी विरोधों का मुकाबला भी कर सकेंगे। इस प्रकार अंतिम रूप में व्यक्ति ही इकाई होगा। यदि व्यक्ति विकास के लिए अपने पड़ोसी से सहायता ले या उस पर निर्भर हो, या बाहरी दुनिया से सहायता ले, तो उस पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ेंगे क्योंकि यह पारस्परिक शक्तियों का मुक्त और स्वैच्छिक क्रिया है। इस प्रकार का समाज काफी सांस्कृतिक होगा, जहाँ प्रत्येक महिला और पुरुष जानते हैं कि उन्हें क्या चाहिए और प्रत्येक व्यक्ति को मालूम होगा कि ऐसा कुछ नहीं माँगना चाहिए जो दूसरों को समान परिश्रम से नहीं मिलता।

"असंख्य गाँवों से निर्मित ऐसी संरचना में उत्तरोत्तर विकास समान वृत्त होंगे, जो आरोही क्रम में व्यवस्थित नहीं होंगे। जीवन पिरामिड की तरह नहीं होगा जिनके षिखर को तल टिकाए रखता है। बल्कि यह समुद्री वृत्त की तरह होगा जिसका केन्द्र व्यक्ति होगा, लेकिन जो गाँव के लिए मर मिटने के लिए तैयार रहेगा। फिर गाँव–गाँव के "वृत्त" के लिए अस्तित्वहीन होना स्वीकार कर लेगा। इस प्रकार यह क्रम तब तक चलता रहेगा जब तक कि यह एक इकाई का रूप न ले ले, अपने दम्भ में ये आक्रामक नहीं होंगे वरन नम्र रहेंगे। इकाई में सभी व्यक्ति समान होंगे और समान रूप से इस समुद्री वृत्त के वैभव का हकदार होंगे। इस प्रकार बाहरी वृत्त शक्ति द्वारा आंतरिक वृत्त को क्षति नहीं पहुँचाएगा बल्कि आंतरिक वृत्त को सुदृढ़ता प्रदान करेगा और स्वयं केन्द्र द्वारा संचालित होगा" (हरिजन, 28 जुलाई 1946)।

2.6 सारांष

भूमण्डलीकरण के प्रतिकूल प्रभावों, सभी रूपों में, इसका सामना अच्छी तरह से किया जा सकता है। इस आषा की रोषनी भारत में 73वें और 74वें संवैधानिक संषोधन के रूप में सामने आई। पंचायती राज संस्थाएँ (PRI) एक नई शक्ति के तौर पर आई। विशेषकर, पंचायती राज संस्थाओं में दलित और महिलाओं की भागीदारी से अच्छे ग्रामीण नेतृत्व और परिवर्तन की आषा बढ़ने लगी। शुरुआत में कुछ असंगतियाँ रह सकती हैं लेकिन दीर्घकालीन परिणामों में ग्रामीण गरीबों की विकास प्रक्रिया में भागीदारी प्रभावपूर्ण रूप से हो सकती है। कोई भी नीति शासक वर्ग के परोपकारी व्यवहार से निर्धारित नहीं होती है। प्रत्येक शुरुआत के लिए, जनता द्वारा विभिन्न विषयों पर विरोध जताने से शासन वर्ग पर दबाव पड़ता है कि वे नीतियों के लिए कानून बनाएँ और उन्हें लागू करें। यहाँ यह कहना आवष्यक है कि जहाँ प्रतिरोध अधिक मज़बूत रहा, वहाँ कार्यक्रमों का क्रियान्वयन तुलनात्मक रूप से अच्छा और गुणात्मक रहा। जनता का यह प्रतिरोध उन्हें अवर्जन का निरीक्षण करने में समर्थ बनाता है और नई संस्थाओं और कूटनीतियों के मुद्दों से संबंधित समस्याओं को हल करता है। राजनीतिक रूप से सचेत लोकतांत्रिक शक्तियों का संगठन और उनकी असमझौता की प्रतिरोध बाज़ारोन्मुखी दुष्प्रभावों को कम करने में सहायता प्रदान करता है। अन्ततः आजीविका, वंचित, भेदभाव जैसे प्रष्नों को लम्बे समय तक अनसुलझा नहीं रखा जा सकता यदि समाज उन्नतिषील, शांति और सौहार्दता से रहना चाहता है।

2.7 बोध प्रष्न

1) सामाजिक–सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण से आप क्या समझते हैं? इसके क्या प्रभाव हैं?

2) राजनीतिक भूमण्डलीकरण के अर्थ और सार तत्व पर चर्चा कीजिए। इसके कुप्रभावों की समीक्षा कीजिए।

3) भारत के संदर्भ में भूमण्डलीकरण के क्या प्रभाव हैं?

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एडम, बी., "दी टेम्पोरल लेण्डस्केप ऑफ ग्लोबलाजिंग कल्चर एंड दी पैराडॉक्स ऑफ पोस्ट मॉडर्न फ्यूचर इन एड्म, बारबरा स्टूअर्ट आलन, (संपा.) *थ्योराइजिंग कल्चर*, यू सी एल प्रेस, लंदन, 1995

अमीन, समीर, *दी लिबरल वायरसः परमानेंट वार एंड अमेरिकनाइजेषन ऑफ दी वर्ल्ड*, आकार बुक्स, दिल्ली, 2005

बागची, अमिया के., "रिच मैनस ग्लोबलाइजेषन", इन भट्टाचार्य, एम. (संपा.) *ग्लोबलाइजेषन*, तूलिका बुक्स, नई दिल्ली, 2004, (जादवपुर विष्वविद्यालय के सहयोग से)

ब्लेनचेट, के., "पार्टिसिपेटरी डेवलेपमेंटः बीटविन होप्स एंड रियल्टी", *इंडियन सोषल साइंस जर्नल*, (ब्लैकवेल, यूनेस्को), 170, 2001, दिसम्बर

गाँधी, एम. के., (1921), इंग्लिष लर्निंग, *यंग इंडिया*, जून 1, इन सी डब्ल्यू एम जी (संपा.) खंड 20, प्रकाषन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली।

गाँधी, एम. के., *हरिजन*, 28 जुलाई 1946

गीड्डनस ए., *कंसीक्यूंस ऑफ मार्डनिटी*, पॉलिटी, कैम्ब्रिज, 1990

भारत सरकार (1960), फर्स्ट फाइव ईयर प्लान,

भारत सरकार (2000), मिड टर्म एप्रेसल ऑफ नाइंथ फाइव ईयर प्लान, योजना आयोग, नई दिल्ली

भारत सरकार (2002), नेषनल ह्यूमन डेवलेपमेंट रिपोर्ट, 2001, योजना आयोग, नई दिल्ली

भारत सरकार (2003), रिपोर्ट ऑफ दी कमेटी ऑन इंडियाज विजन, 2020, योजना आयोग, एकडेमी फाउंडेषन, नई दिल्ली

हॉल, एस., दी लोकल एंड ग्लोबलः ग्लोबलाइजेषन एंड एथेनीसिटी इन किंग, ए, (संपा.), *कल्चर, ग्लोबलाइजेषन एंड वर्ल्ड सिस्टम,* मेकमिलन, लंदन, 1991

कृष्णास्वामी, श्रीधर, पावर, वेल्थ, शेयर्ड अनइक्वली, दी वर्ल्ड इकॉनामिक फॉरम, न्यूयॉर्क, *दि हिन्दू,* 6 फरवरी 2002

पेनीच, लियो, ग्लोबलाइजेषन एंड दी स्टेट, इन पेचीज, एट. एल. (संपा.), *दी ग्लोबलाइजेषन* डिकेड, आकार बुक्स, फॉर साउथ एषिया, 2006

पटनायक, प्रभात, *दी रिट्रीट टू इन फ्रीडम,* ग्लोबलाइजेषन एंड दी इमर्जिंग ग्लोबल पॉलिटिक्स, तूलिका बुक्स, नई दिल्ली, 2003

नारायनन, के.आर., शेयरिंग डेमोक्रेसी, *मैनस्ट्रीम,* दिसम्बर 27, 2003

प्रसाद, पी.एच., रूट्स ऑफ पॉलिटिकल स्ट्रगल, *इकॉनामिक एंड पालिटिकल वीकली,* फेबरूअरी, 1991

राधाकृष्ण, आर., एग्रीकलचरल ग्रोथ, एम्पलायमेंट एंड पॉवर्टीः ए पॉलिसी प्रेसपेक्टिव, *इकॉनामिक एंड पालिटिकल वीकली,* जनवरी 19, 2002

रेडिस, हुगो, *टेकिंग ग्लोबलाइजेषन सीरियसलली इन पेनिच, लीयो और अन्य* (संपा.), *दी ग्लोबलाइजेषन डिकेड : ए क्रिटिकल रीडर,* आकार बुक्स, फॉर साउथ एषिया, 2006।

सेन, अभिजीत, एसटीमेट्स ऑफ कंज्यूमर एक्सपेंडिचर एंड इट्स डिसट्रीब्यूषनः स्टेटी स्कूल, प्रायोरिटीस आफ्टरी एन एस एस 55 राउण्ड, *इकॉनामिक एंड पालिटिकल वीकली,* खंड 55, सं. 51, दिसम्बर 16, 2001

सुंदरम, के. और एस.डी. तेंदूलकर, एन ए एस – एन एस एस ऐसटिमेंट्स ऑफ प्राइवेट कंसप्सन फॉर पॉवर्टी ऐसटीमेंषन : ए डिसएग्रीगेटेड कम्पेरिजन फॉर 1993–94, *इकॉनामिक एंड पालिटिकल वीकली,* खंड 55, सं. 51, दिसम्बर 16, 2001

यू एन डी पी, ह्यूमन डेवलेपमेंट रिपोर्ट, 2001, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,

वैद्यानाथन, ए, पॉवर्टी एंड डेवलेपमेंट पॉलिसी, *इकॉनामिक एंड पालिटिकल वीकली,* मई 26, 2001